REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.2331(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 7 | ISSUE - 8 | MAY - 2018

अपराध एवं दण्ड सिद्धांत एक नैतिक विमर्श

चंदन कुमार चंचल
शोध छात्र , स्नातकोत्तर दर्शनशास्त्र विभाग ,
तिलकामांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर.

प्रस्तावना :

बने हुए सामाजिक नियमों को तोड़ना अपराध की श्रेणी में आता है। यदि कोई व्यक्ति समाज द्वारा बनाए गए आर्थिक, धार्मिक, राजनैतिक एवं मानवीय रहन-सहन के नियम, विभिन्न समय एवं सभ्यताओं के अनुसार प्रतिपादित नियमों का विरोधाभाषी कार्य करता है, तो उसे अपराधी समझा जाता है। अपराध एक प्रकार की सामाजिक विषमता है। यह व्यक्तिगत मानसिक विषमता का परिणाम है। अपराध एक साभिप्राय कार्य है। या यों कहें कि यह एक असामाजिक कार्य है। हमारे समाज में आज विघटनकारी प्रवृत्तियाँ अत्यंत प्रबल है। व्यक्ति कई प्रकार के तनाव एवं कुण्ठाओं से ग्रसित है। राजनीतिक, सामाजिक व्यवस्था उसे प्रभावित करती है। परिणाम स्वरूप वह सामाजिक एवं कानूनी नियमों का उल्लंघन करता है, जिससे समाज में विकृति आती है और परिणामस्वरूप अपराध प्रवृत्ति में वृद्धि देखी जा रही है। जहाँ तक अपराध का संबंध है अपराधिक व्यवहार को अच्छी तरह समझने के लिए हमें इसे सामाजिक, मनोवैज्ञानिक एवं नैतिक आधार पर समझना आवश्यक है।

सामाजिक प्राणियों द्वारा ऐसे कार्य किया जाना जो समाज के दृष्टिकोण से अमान्य एवं घृणित हो अपराध कहलाता है। अपराध का पर्यायवाची शब्द 'दंडाभियोग' है जिसे अंग्रेजी में Crime कहते हैं। अपराध एक समाजविरोधी क्रिया है। समाज द्वारा निर्धारित आचरण का उल्लंधन या उसकी अवहेलना भी अपराध कहलाता है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि यह एक ऐसा अमान्य कार्य है; जो समाज एवं देश के कानून के विरूद्ध है और जिसके लिए दण्ड का प्रावधान है। यदि अपराधी को दण्ड न दिया जाये तो व्यवस्थित समाज का अस्तित्व ही खतरे में पड़ जाएगा इसलिए अपराधी को दण्ड मिलना आवश्यक है।

मनोविज्ञान अपराध को मनुष्य के मानसिक उलझनों का परिणाम मानता है। जिस व्यक्ति का बाल्यकाल प्रेम एवं प्रोत्साहन के वातावरण में नहीं व्यतीत होता, उसके मन में अनेक प्रकार की हीनता की मानसिक ग्रंथियाँ बन जाती है। अल्फ्रेड एडलर का कहना है कि जिस व्यक्ति के मन में हीनता की मानसिक ग्रंथियाँ रहती है उसमें अनिवार्य रूप से अपराध करने की प्रवृत्ति पाई जाती है। मनः शारीरिक दृष्टि से अपराध पर विचार करते हुए लांब्रोजो ने कहा था कि 60 प्रतिशत अपराधियों के शरीर की बनावट असामान्य होते हैं। अपराध एक प्रकार की सामाजिक, व्यक्तिगत, मानसिक विषमता का परिणाम हैं। समाज में अपराध को कम करने के लिए दण्डविधान को कठोर करना पर्याप्त नहीं है बल्कि उसके मनोवैज्ञानिक एवं नैतिक पक्षों का अध्ययन करना आवश्यक होगा।

अपराध जो समाज द्वारा निर्धारित आचरण का उलंघन या उसकी अवहेलना है, उसे कम या रोकने के लिए दण्ड का प्रावधान है। भारतीय दण्ड संहिता किसी व्यक्ति को अपराधिक मामले में दण्ड देकर उसे एक आदर्श नागरिक के रूप में बदलना चाहता है। लेकिन कदाचित् इसका परिणाम कुछ और ही होता है। केवल समाज विरोधी कार्य करने से व्यक्ति अपराधी नहीं हो जाता बल्कि उसके

मनोवैज्ञानिक, सामाजिक एवं नैतिक पक्षों को जानना आवश्यक होता है। अपराधिक मामले में मानवाधिकार यह मानता है कि अत्यंत कठोर दण्ड देना मानवता नहीं बल्कि यह भी एक अपराध है।

अर्थात यह सिद्धान्त दण्ड के स्थान पर सुधार का समर्थन करता है। इस प्रकार अपराध और दण्ड में परम्पर यह संबंध है कि यह अपराधी को समझने की चेष्ट करता है। समाज में अपराध को कम करने के दण्ड विधान को कठोर करना प्रर्याप्त नहीं बल्कि इसके लिए समाज में सुशिक्षा की आवश्यकता होती है।

अपराधशास्त्र का एक मुख्य प्रभाग है अपराधी के लिए दण्ड का प्रावधान भारतीय दण्ड संहिता में भारतीय नागरिक के लिए अपराधिक मामले की जाँच व दण्ड प्रक्रिया का प्रावधान है जिसका मूल लक्ष्य है, ''अपराध को समाप्त करना न की अपराधी को''[1] अपराध या दण्डाभियोग की परिभाषा निम्न रूपों में दी जा सकती है :-

1. दण्डाभियोग समाजविरोधी क्रिया है
2. समाज द्वारा निर्धारित आचरण का उल्लंघन या उसकी अवहेलना दण्डाभियोग है।
3. यह एक ऐसी क्रिया या क्रिया में त्रुटि है जिसके लिए दोषी व्यक्ति को कानून द्वारा निर्धारित दण्ड दिया जाता है।

दण्ड के सिद्धांत :

नीतिशास्त्री दण्ड के तीन सिद्धांत मानते हैं।

1. प्रतीकारवाद सिद्धांत (Retributive Theory)

इस सिद्धान्त के अनुसार दण्ड एक न्यायोचित व्यापार है। दण्ड का लक्ष्य नैतिक नियम की उच्चता तथा प्रभुता की रक्षा और दोषी को दण्डित करना है। जब कोई अपराधी नैतिक नियमों का उल्लंघन करता है तब न्याय का तकाजा है कि उसे सजा मिलनी चाहिए जिससे नैतिक नियमों की प्रतिष्ठा एवं प्रभुता कायम रहे। अगर अपराधी को दण्ड नहीं मिलता तो नैतिक नियम के गरिमा पर आँच आएगी।

2. निवर्तनवादी सिद्धान्त (Preventive or Deterrent or Exemplary Theory):

इस सिद्धान्त के अनुसार किसी अपराधी को सजा देने का यह लक्ष्य रहता है कि उस अपराध की पुनरावृति उस अपराधी या अन्य व्यक्ति द्वारा न हो।

3. सुधारवादी सिद्धान्त (Reformative or Educative Theory) :

इस सिद्धांत के अनुसार अपराधी को प्रतिकार की भावना से सजा नहीं दी जाती, बल्कि, उसमें सुधार की भावना से दण्ड दी जाती है। यहाँ दण्ड का लक्ष्य समाज का सुधार नहीं, बल्कि उस अपराधी को सुधारना है जिसने कोई अनुचित कार्य किया है। अपराधी को उसी के हित में दण्ड दिया जाता है, दूसरों के हित में नहीं। प्रत्येक अपराध के कुछ कारण अवश्य होते हैं। यदि उन कारणों को हटा दिया जाए तो व्यक्ति पुनः अपराध नहीं करेगा।[2]

कुछ शताब्दी पहले अपराध करने पर अपराधी को घोर यातना दी जाती थी और उनके साथ पशुओं की तरह व्यवहार किया जाता था। हाथ पैर कटवा दिए जाते थे, कोड़े से सजा दी जाती थी। लेकिन वर्तमान समय में अपराध को एक रोग समझा जा रहा है और इस रोग के उपचार हेतु कारगर उपाय की तलाश की जा रही है। कारागार यातना के लिए नहीं बल्कि सुधार-गृह की भांति होना चाहिए।

लंब्रोजो जो एक इटालियन दार्शनिक थे उन्होंने अपराध के बजाय 'अपराधी' को पहचानने पर ज्यादा जोर दिया।[3] फेरी जो एक समाजशास्त्री थे उनका मानना था कि अपराध चाहे कोई भी किसी भी परिस्थिति में करें, उसका और कोई कारण नहीं, केवल यही कहा जा सकता है कि व्यक्तिगत स्वतंत्र

इच्छा से किया गया है या प्राकृतिक या स्वाभाविक कारणों का परिणाम है।[4] उनके अनुसार अपराधी चार प्रकार के होते हैं।

(a) हत्यारे
(b) उग्र अपराधी
(c) संपति के विरूद्ध अपराधी
(d) कामुक वासना के अपराधी

पहली बार अपराधी के सुधार के लिए फौन हामेल ने अपनी कलम से लिखा कि अपराधी को अपने आचरण में सुधार के लिए एक मौका अवश्य मिलना चाहिए। मानवाधिकार आयोग का कहना है कि अपराधी भी एक मनुष्य है उनका भी नैसर्गिक अधिकार है जो उसे प्राप्त होना चाहिए। सजा देते समय मानवता को नहीं भुलना चाहिए अन्यथा एक अपराधी और एक सामान्य मानव में क्या फर्क रह जाएगा। तर्क के द्वारा यह समझा जा सकता है कि कभी कभी अपराध अनजाने में भी हो जाता है। उदाहरण के तौर पर यदि कोई लड़का अपने छत पर पतंग उड़ा रहा है और पतंग उड़ाते समय उसके पैर से ठोकर लगकर एक पत्थर नीचे रास्ते पर चलने वाले किसी राहगीर के सिर पर गिर जाता है और इस कारण उस व्यक्ति की मौत हो जाती है। तो प्रश्न उठता है कि उस उड़के को सजा क्या और क्यों मिलनी चाहिए। उस लड़के को अगर सजा दी जाती है तो दूसरी नजरिए से देखने पर वह बिलकुल निर्दोष प्रतीत होता है। क्योंकि यह घटना जानबूझ कर नहीं की गई थी। यदि कोई पक्ष उसे अपराधी इस कारण मानता है कि उसे पतंग जिम्मेदारी पूर्वक उड़ाना चाहिए था तो उस राहगीर को भी आगे, नीचे एवं उपर ध्यानपूर्वक देखकर चलना चाहिए था। इस लिए दण्ड बहुत सोच समझ कर दी जानी चाहिए। तात्पर्य यह है कि दण्ड के सुधारात्मक सिद्धान्त में उसका विधान दोषी की अवस्था, सामाजिक वातावरण और स्थिति विशेष के आधार पर किया जाता है। अर्थात् दण्ड व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए जिससे अपराधी में सुधार हो। अपराध का अंत हो न की अपराधी का।

निष्कर्ष :

अपराध एक ऐसी विघटनकारी प्रक्रिया है जिसके आधार पर समाज की व्यवस्था में व्यावधान उपस्थित होते हैं और सामाजिक सुरक्षा एवं शांति खतरे में पड़ जाती है। अपराध के लिए समाज एवं वतावरण दोनों को उत्तरदायी माना जाता है। वर्त्तमान समय में भारत के अनेक क्षेत्रों में अपराध की संख्या में काफी वृद्धि हुई है। भारत में अपराध की निवृति के लिए दण्ड सिंद्धांत के सामाजिक एवं नैतिक पक्ष को उजागर करने पर बल दिया जाना चाहिए। तथा भारतीय दण्ड संहिता एवं मानवाधिकार के तहत अपराध निवृति का उपाय प्रस्तुत करना चाहिए। अपराधी को सुधारने के लिए मनोवैज्ञानिक उपायों का प्रयोग होना चाहिए। साथ ही साधारण शिक्षा एवं नैतिक शिक्षा तथा धार्मिक व्याख्यान एवं औद्योगिक प्रशिक्षण जैसे अन्य सुनियोजित व्यवस्थाओं को अपनाना चाहिए।

दण्ड का प्रावधान मानव समाज में कहीं भी अपराध कम करने में सहायक सिद्ध नहीं हुआ है। फिर भी अपराधियों को दण्डित करने की अनिवार्यता निरंतरता बनी हुई है।

इससे लोगों को भावनात्मक संतोष तो मिल जाती है लेकिन समाज में अपराधों की संख्या कम नहीं होती। इस व्यवस्था में क्रांतिकारी परिवर्तन लाया जाना चाहिए। न्याय का तकाजा यह है कि अपराधियों को केवल दण्डित ही न किया जाये बल्कि अपराधिक घटनाओं से प्रभावित व्यक्ति की क्षतिपूर्ति एवं उसके अधिकारों की रक्षा से भी उसे अवगत किया जाना चाहिए।

संदर्भ-सूची :

1. शर्मा, रामनाथ एवं शर्मा, राजेन्द्र कुमार : अपराधशास्त्र, एवं दंडशास्त्र तथा सामाजिक विघटन, गौतम पब्लिकेशन, इलाहाबाद, वर्ष-2008, पृष्ठ संख्यां-26-27
2. लांब्रोजो, एम0 : फर्स्ट मिस्टेक, मार्स बुक्स ऐंजसी,

पार्ट–1, वर्ष–1971, पृष्ठ संख्या–56

3. फेरी, जौन : क्रिमिनल लॉ एण्ड क्रिमिनल ए जरनल ऑफ अमेरिकन फिलॉसफी, वाशिंगटन, डी0सी0, वर्ष–1980, पृष्ठ संख्या–18

4. https://hi.m.wikipedia .org/wiki/**अपराध**

चंदन कुमार चंचल
शोध छात्र , स्नातकोत्तर दर्शनशास्त्र विभाग , तिलकामांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर.